भारत का विधि आयोग

विधियों के निरसन और संशोधन से संबंधित

एक सौ उनसठवीं रिपोर्ट

भाग 1

1998

सं० 6(3)(41)/98-वि०आ०(वि०स०)

न्यायमूर्ति
बी०पी०जीवन रेड्डी,
अध्यक्ष, भारत का
विधि आयोग

भारत का विधि आयोग
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली-110 001
टैली-3384475

निवास :
1 जनपथ,
नई दिल्ली -110 001
टैली० 3019465

तारीख 28 जुलाई, 1998

प्रिय डा० थम्बी दुरई,

मैं, इस पत्र के साथ "विधियों के निरसन और संशोधन" से संबंधित 159वीं रिपोर्ट का भाग 1 भेज रहा हूं।

2. आयोग द्वारा इस विषय का अध्ययन, भारत के विधि आयोग के उन निर्देश-निबंधनों के अनुसरण में, आरंभ किया गया था जिनके द्वारा इसका गठन हुआ था। उक्त निर्देश-निबंधनों के क्रम में, आयोग ने, विभिन्न मंत्रालयों से, अनुरोध किया था कि वे तत्संबंधी मंत्रालय/विभाग द्वारा प्रशासित की जाने वाली अधिनियमितियों के पुनर्विलोकन के लिए संबंधित विभागों में गठित किए गए विशेषज्ञ समूह/ विभागीय समितियों के अभिमत हमें भेजें। आयोग को विभिन्न मंत्रालयों/विभागों से बहुत कुछ प्रस्ताव/प्रत्युत्तर प्राप्त हुए हैं। कुछ विभागों ने कहा है कि उनका कार्य अभी पूरा होना है, चूंकि, मंत्रालयों/विभागों की संख्या अधिक है और उनके द्वारा सैकड़ों अधिनियम प्रशासित किए जा रहे हैं, अतः सभी के प्रस्तावों की प्रतीक्षा करने और एक व्यापक रिपोर्ट तैयार करने में अपेक्षित और अनावश्यक विलंब होगा। तद्नुसार, आयोग ने, निश्चय किया कि "विधियों के निरसन और संशोधन" के विषय पर एक से अधिक रिपोर्ट भेजेगा। यह ऐसी ही पहली रिपोर्ट है।

3. इस रिपोर्ट में, कुछ ऐसे केन्द्रीय अधिनियमों के निरसन की आवश्यकता पर ध्यान दिया गया है जो पश्चात्वर्ती विधान के अधिनियमन को देखते हुए, अप्रचलित हो गए हैं, अथवा जो विधियां बदली हुई दशाओं को ध्यान में रखते हुए

अंगत काफी पुरानी हो गई हैं, इसलिए, जिन्हें निरसित किया जाना जरूरी है।

सादर,

आपका,

(बी०पी० जीवन रेड्डी)

डा० थम्बी दुरई,
विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्री,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली-110 001

विषय-सूची

पृष्ठ सं0

अध्याय 1	परिचय	
अध्याय 2	विधियों के निरसन और संशोधन की सिफारिश करने में अनुसरण किए जाने वाले सिद्धान्त	
अध्याय 3	निरसन / आक्षेप / संशोधन करने के लिए सिफारिश किए गए केन्द्रीय अधिनियम	
अध्याय 4	निष्कर्ष	
उपाबंध 1	तारीख 16-10-97 का पत्र	
उपाबंध 2	तारीख 23-2-98 का पत्र	
उपाबंध 3	तारीख 6-3-98 का पत्र	

अध्याय -1

भूमिका

1.1 विस्तार

इस रिपोर्ट में, कुछ ऐसे केन्द्रीय अधिनियमों के निरसन की आवश्यकता पर ध्यान दिया गया है जो पश्चात्वर्ती विधान के अधिनियमन को देखते हुए, अप्रचलित हो गए हैं अथवा जो विधियां बदली हुई दशाओं को ध्यान में रखते हुए, असंगत अथवा पुरानी हो गई हैं और इसलिए जिन्हें निरसित किया जाना जरूरी है। विधि आयोग ने, यह विषय, उसे सौंपे गए उन कार्यों के अनुसरण में, हाथ में लिया है जिनके लिए इसका गठन किया गया था। सौंपे गए संगत कार्यों का उद्धरण नीचे दिया जा रहा है :-

"विधि आयोग को सौंपे गए कार्य निम्नलिखित हैं :-

1. अप्रचलित विधियों का पुनर्विलोकन / निरसन :

   (क) ऐसी विधियों का पता लगाना जो अब जरूरी अथवा संगत नहीं हैं और जिन्हें तुरंत निरसित किया जा सकता है ;

   (ख) ऐसी विधियों का पता लगाना जो आर्थिक उदारीकरण की विद्यमान दशा के अनुरूप हैं और जिनमें कोई परिवर्तन जरूरी नहीं है ;

   (ग) ऐसी विधियों का पता लगाना जिन्हें परिवर्तन अथवा संशोधन किया जाना अपेक्षित है और उनके संशोधन के लिए सुझाव देना ;

   (घ) विभिन्न मंत्रालयों/विभागों में विशेषज्ञ समूहों द्वारा दिए गए पुनरीक्षण/संशोधन के सुझावों पर, उनके समन्वयन और सामंजस्यकरण की दृष्टि से, व्यापक परिप्रेक्ष्य में विचार करना ;

(छछ) ऐसे विधानों की बाबत, जिनका एक से अधिक मंत्रालय/विभाग के कार्यकरण पर प्रभाव पड़ता है, मंत्रालयों/विभागों द्वारा उसको किए गए निर्देशों पर विचार करना ;

(ज) विधि के क्षेत्र में, नागरिकों की शिकायतों को शीघ्रता से निपटाने के लिए उपयुक्त उपायों का सुझाव देना ।"

इनके अतिरिक्त, आयोग को सौंपे गए कार्यों में से एक कार्य निम्न भी है :-

" (ग). सरकार को, अप्रचलित विधियों के निरसन और ऐसी विधियों या उनके किसी भाग के अधिनियमन द्वारा, जिनकी उपयोगिता समाप्त हो गई है, परिनियम पुस्तक को अद्यतन बनाए रखने के लिए उपाय की बाबत सरकार को सिफारिश करना ।"

पुनरावृत्ति होने के बावजूद भी, इस बात पर गौर किया जा सकता है कि भारत के वर्तमान विधि आयोग को सौंपे गए पूर्व उद्धृत कार्यों के पैरा 1(घ) में, जैसा कि विधि और न्याय मंत्रालय, विधि कार्य विभाग के तारीख 16-9-97 के आदेश में अधिकथित है, अन्य बातों के साथ-साथ यह अपेक्षा की गई है :-

"(घ) विभिन्न मंत्रालयों/विभागों में विशेषज्ञ समूहों द्वारा किए गए पुनरीक्षण/संशोधन के सुझावों पर, उनके समन्वयन और सामंजस्यकरण की दृष्टि से, व्यापक परिप्रेक्ष्य में विचार करना ।"

1.2 विधि आयोग ने, सौंपे गए पूर्वोक्त कार्यों के परिणामस्वरूप, विभिन्न मंत्रालयों को तारीख 19-10-97, 23-2-98 और 5-3-98 के पत्र (क्रमश: उपाबंध 1,2 और 3) भेजे कि वे संबंधित मंत्रालयों/विभागों द्वारा प्रशासित की जाने वाली अधिनियमितियों के पुनर्विलोकन के लिए गठित

संबंधित विभागों में बनाई गई विशेषज्ञ समूहों/विभागीय समिति के अभिमत हमें भेजें। आयोग को विभिन्न मंत्रालयों/विभागों से पर्याप्त प्रस्ताव/प्रत्युत्तर प्राप्त हुए हैं। उनमें से कुछ ने विनिर्दिष्ट प्रस्ताव भेजे हैं जबकि कुछ अन्य ने यह कहा है कि या तो वे किसी अधिनियम का प्रशासन नहीं करते हैं या उनके द्वारा प्रशासित किए जाने वाले अधिनियमों में कोई संशोधन अपेक्षित नहीं है। कुछ अन्य ने यह कहा है कि उनका कार्य अभी भी पूरा होना है। आयोग ने ऐसे सभी प्रत्युत्तरों/प्रस्तावों पर विचार किया है।

संबद्ध मंत्रालयों/विभागों की बड़ी संख्या और उनके द्वारा प्रशासित किए जाने वाले सैकड़ों अधिनियमों को ध्यान में रखते हुए, आयोग के सामने यह प्रश्न उठा कि इन विभिन्न प्रस्तावों पर किस तरह विचार किया जाए। सभी प्रस्तावों की प्रतीक्षा करने और एक व्यापक रिपोर्ट तैयार करने में तात्विक और आवश्यक विलंब होगा। तदनुसार, आयोग ने, यह विनिश्चय किया कि वह 'विधियों का निरसन और संशोधन' के विषय पर एक से अधिक रिपोर्ट भेजेगा। यह ऐसी ही पहली रिपोर्ट है।

1.3 अप्रचलित अधिनियमितियों को निरसित करने की आवश्यकता:-

परिनियम पुस्तक पुनर्विलोकन की आवश्यकता स्पष्ट है। देश के नागरिकों से यह अपेक्षा है कि वे अपने जीवन और कार्यकलापों से संगत परिनियमों से सुपरिचित बने रहें। यदि परिनियम पुस्तक में ऐसे परिनियम समाविष्ट हों जो वस्तुतः, 'मृत' हैं यद्यपि औपचारिक रूप से विद्यमान हैं तो ऐसा परिचय संतोषप्रद रूप से नहीं किया जा सकता और उचित रूप से बनाया नहीं रखा जा सकता। नागरिक वर्तमान विधि से संबद्ध होते हैं, उन्हें ऐसे व्यापक क्षेत्र से गुजरने के लिए बाध्य नहीं किया जाना चाहिए जहां अप्रचलित अथवा पुराने परिनियमों ने परिदृश्य को ढक रखा हो। ऐसी स्थिति से, दृष्टि धुंधली पड़ जाती है और अच्छा समय तथा संसाधनों का अपव्यय होता है। विद्यमान विधि के साथ, अप्रचलित विधि का क्या

रहना समझने में भी भ्रम का सृजन करती है । (भारत का विधि आयोग - 1947 से पूर्व के कतिपय केन्द्रीय अधिनियमों के निरसन से संबंधित एक सौ अड़तालीसवीं रिपोर्ट, पैरा 1.2) ।

1.4 परिनियम विधि पुनरीक्षण के कृत्य :-

परिनियम विधि पुनरीक्षण का कृत्य और वे सिद्धान्त, जिनका इसके प्रयोग के पहले पालन किया जाना चाहिए, स्टेट्यूट लॉ रिविजन बिल पर 1863 में बोलते समय लार्ड वेस्टबरी, लार्ड चांसलर द्वारा स्पष्ट रूप से बताए गए हैं । उन्होंने जो कुछ कहा है वह नीचे उद्धृत है (लार्ड साइमन आफ ग्लेश डेल एंड वेब, " कंसोलिडेशन एंड स्टेट्यूट लॉ रिविजन " (1975), पब्लिक लॉ 285, 291) द्वारा उद्धृत लार्ड वेस्टबरी, " पार्लियामेंट्री डिबेट्स " (1863), थर्ड सिरीज, वाल्यूम 171, कालम 775) ।

> " परिनियम पुस्तक का, उन सभी अधिनियमितियों को, जो अब प्रवर्तन में नहीं रह गई है, हटाकर और जो शेष रह गई है उनको व्यवस्थित कर तथा उन्हें उचित शीर्षों के अंतर्गत उनका प्रवर्गीकरण करके, बिखरे हुए परिनियमों को एक साथ लाकर अप्रयुक्त और अंगत उपबंधों को समाप्त करके और इस प्रकार अंगत और परस्पर विरोधी अधिनियमितियों की अव्यवस्था के बजाय एक सम्पूर्ण सामंजस्य लाकर पुनरीक्षण और परिशोधन किया जाना चाहिए " (देखिए भारत का विधि आयोग तियानवेवीं रिपोर्ट, पैरा 1.4) ।

जैसी कि लार्ड वेस्टबरी ने परिकल्पना की थी, परिनियम विधि पुनरीक्षण का आशय चार प्रमुख उद्देश्यों को प्राप्त करना है (देखिए भारत के विधि आयोग की 148वीं रिपोर्ट, पैरा 1.8) :-

(i) शोधीकरण - ऐसा, अप्रचलित अधिनियमितियों को छांटकर किया जा सकता है;

(ii) व्यवस्था और संकलन - यह वस्तुतः प्रवृत्त अधिनियमितियों को व्यवस्थित करके और उनका प्रवर्गीकरण करके आरंभ किया जा सकता है;

(iii) विधान तक सहज पहुंच - "बिखरे हुए परिनियमों को एक साथ लाकर" समेकन के माध्यम से इसे प्राप्त किया जा सकता है; और

(iv) सामंजस्य - "विसंगत और असंगत उपबंधों" को हटाकर प्राप्त किया जा सकता है।

यदि इन लक्ष्यों को क्रमिक रूप से अपनाया जाए, तो भूतकाल के ऐसे सभी विधान, जो निरर्थक हो गए हैं, हटाए जा सकते हैं, वर्तमान विधानों को व्यवस्थित किया जा सकता है और हम भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार हो सकते हैं।

1.5 औपचारिक निरसन की आवश्यकता और विधि में सुधार :-

जैसा कि विधि आयोग ने अपनी पूर्ववर्ती रिपोर्ट (भारत का विधि आयोग, 14वीं रिपोर्ट, पैरा 1.6) में संकेत किया है कि जिस तरह मानव मात्र की नैसर्गिक मृत्यु होती है उसी प्रकार परिनियम नैसर्गिक रूप से समाप्त नहीं होते हैं। केवल कुछ परिनियमों को छोड़कर, जिनका जीवनकाल उनके अधिनियमन के समय ही विधायिका द्वारा पहले ही अवधारित कर दिया जाता है, कोई भी परिनियम, जब तक कि उसे अभिव्यक्त रूप से एक अस्थायी अवधि के लिए अधिनियमित न किया गया हो, तब तक विद्यमान बना रहता है जब तक कि निरसित करके उसे समाप्त न कर दिया जाए। इस सीमा तक परिनियम अनश्वर होते हैं।

यह परिणाम इस सुस्थापित प्रतिपादना से प्राप्त होता है कि किसी परिनियम का दीर्घकालीन अप्रचलन उसके निरसन के तुल्य नहीं है [पैरिन क्राम यू०एस० (1914) 58 (नवीनतम संस्करण 69)]। यहां तक कि जहां पूर्व अधिनियमिति के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र के प्रत्येक अंश का समावेश करते हुए, किसी विशेष वस्तु से संबंधित पूर्ववर्ती अधिनियमिति का पश्चात्वर्ती अधिनियम में अनुसरण किया जाता है, वहां भी न्यायालय पूर्ववर्ती अधिनियमिति को बनाए रखना चाहते हैं क्योंकि वे उसका विवक्षित निरसन नहीं मानते। इस तरह न तो किसी पुरानी अधिनियमिति का प्रवर्तित न होना और न ही इस तथ्य का कि उसकी विषयवस्तु पर्याप्त रूप से पूर्ववर्ती अधिनियमिति में आ जाती है, विधियां पुरानी अधिनियमिति की जीवनी शक्ति समाप्त करने का प्रभाव नहीं रखती है। वह प्रभाव एक औपचारिक निरसन अधिनियम द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

इन उद्देश्यों के अतिरिक्त, विधि आयोग को व्यापक परिप्रेक्ष्य में, उन विधियों को भी देखना है जो आर्थिक सेक्टर में सार्वभौमीकरण के बदलते हुए परिदृश्य के अनुसार, आर्थिक उदारीकरण की विद्यमान जलवायु के अनुरूप नहीं हैं। इस प्रकार राजनीति और आर्थिक मोर्चे पर परिस्थितियों में परिवर्तन भी सुसंगत विधि में, जब वह अधिनियमित की गई थी, परिवर्तनों पर विचार करना आवश्यक बना देता है।

1.6 पूर्ववर्ती रिपोर्ट :-

जांच की ऐसी प्रकृति पर वर्तमान रिपोर्ट भारत के विधि आयोग की पहली रिपोर्ट नहीं है। पहले भी विधि आयोग को, ऐसी जांच करने के लिए एक से अधिक अवसर मिले थे। वर्ष 1958 में, आयोग ने, उन सभी ब्रिटिश परिनियमों की जांच की थी जो भारत में लागू होते थे और आयोग ने, कनवर्ट्स मैरिज डिस्सोल्यूशन ऐक्ट के निरसन की सिफारिश करते हुए, एक रिपोर्ट भेजी थी, (15वीं रिपोर्ट)। इसके पश्चात् आयोग ने हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम के निरसन की सिफारिश करते हुए, एक और रिपोर्ट अग्रेषित की थी (81वीं रिपोर्ट)। इसके अतिरिक्त, 1984 में

विधि आयोग ने, कतिपय अप्रचलित केन्द्रीय अधिनियमों के निरसन से संबंधित एक व्यापक रिपोर्ट प्रकाशित की थी [भारत का विधि आयोग, कतिपय अप्रचलित केन्द्रीय अधिनियमों के निरसन से संबंधित 98वीं रिपोर्ट) (1984)] । इस रिपोर्ट में, अन्य बातों के साथ-साथ, निरसनकारी अधिनियमों के कार्यकरण और महत्व से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण सामग्री सम्मिलित है और हमने उस सामग्री में से कुछ सामग्री का उपयोग किया है । आयोग ने, पुन: 1982 में कतिपय 1947 से पूर्व केन्द्रीय अधिनियमों के निरसन के संबंध में, अपनी 14वीं रिपोर्ट में , 15 अगस्त, 1947 के पूर्व पारित केन्द्रीय अधिनियमों के निरसन के प्रश्न पर विचार किया था ।

1.7 विचार विमर्श की स्कीम :-

इन परिचायक संप्रेक्षणों को निर्दिष्ट करके, अब हम अगले अध्याय में उन सिद्धान्तों पर विचार करने जा रहे हैं जिनका केन्द्रीय अधिनियमों के निरसन की सिफारिश करने में अनुसरण किया जाना है । उसके पश्चात्, हम अपने अध्ययन के परिणामों का सार प्रस्तुत करेंगे और उन पर अपने निष्कर्ष देंगे ।

अध्याय 2

विधियों के निरसन और संशोधन की सिफारिश करने में अनुसरण किए जाने वाले सिद्धांत :

2.1 व्यापक अभिगम : -

पूर्ववर्ती अध्याय में, उद्धृत विधि आयोग का गठन करने वाले निबंधन निर्देशों के अनुसरण में , आयोग ने, केन्द्रीय सरकार के विभिन्न मंत्रालयों / विभागों को तारीख 10-10-97, 23-2-98 और 5-3-98 के पत्र भेजे थे (क्रमश: उपाबंध 1,2 और 3) कि वे विभिन्न मंत्रालयों/विभागों में गठित विशेषज्ञ समूहों द्वारा किए गए अधिनियमों के पुनरीक्षण/संशोधन के लिए, उनका समन्वय करने और उनमें सामंजस्य स्थापित करने की दृष्टि से, हमें सुझाव भेजें ।

केन्द्रीय सरकार के विभिन्न मंत्रालयों/विभागों में गठित विशेषज्ञों समूहों ने अपनी सिफारिशें भेजी हैं जिनका मोटे तौर पर चार शीर्षों के अधीन वर्गीकरण किया जा सकता है :-

(i) ऐसे अधिनियम जिनमें किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है ;

(ii) ऐसे अधिनियम जिन्हें निरसित किया जाना अपेक्षित है ;

(iii) ऐसे अधिनियम, जिन्हें आशोधित किया जाना और एक अधिनियमिति के रूप में पुन: अधिनियमित किया जाना अपेक्षित है ; और

(iv) ऐसे अधिनियम जिनमें परिवर्तन अभी भी विचाराधीन है ।

जहां तक ऊपर मद (i) में उल्लिखित अधिनियमों का संबंध है , आयोग को स्पष्टत: कोई टीका-टिप्पणी नहीं करना है ।

तथापि, ऊपर कथित अन्य मदों के संबंध में, आयोग ने, विशेषज्ञ समूहों की सिफारिशों की जांच की है और इस रिपोर्ट के पश्चात्‌वर्ती अध्याय में उल्लिखित अधिनियमों के, यथास्थिति, निरसन, आमेलन या संशोधन के लिए सिफारिशों के प्रस्ताव किए हैं।

2.2 अध्ययन की स्कीम :-

विधि आयोग ने, केन्द्रीय सरकार के तत्संबंधी मंत्रालयों के अधीन आने वाली केन्द्रीय विधियों की और उनके द्वारा प्रशासित विधियों की, विभागवार जांच करना सुविधाजनक समझा है। हम प्रत्येक विभाग के उत्तरों पर विचार करेंगे और उन पर अपनी टिप्पणियां दें। आयोग ने, विभिन्न विभागों के उत्तरों की रिपोर्टों में उल्लिखित विभिन्न अधिनियमों का अनुपालन किया है और अपने निष्कर्ष निकाले हैं जो आवश्यक नहीं है कि वे विभागों के अभिमतों के समान ही हों।

अध्याय 3

निरसन/आमेलन/संशोधन करने के लिए सिफारिश किए गए केन्द्रीय अधिनियम

3.1 वित्त मंत्रालय (आर्थिक कार्य विभाग) से प्राप्त प्रस्ताव :-

हम सर्वप्रथम वित्त मंत्रालय के आर्थिक कार्य विभाग के " आर्थिक कार्य विभाग से संबंधित विशेषज्ञ समूहों की रिपोर्ट " के रूप में प्राप्त प्रस्तावों पर विचार करेंगे जो उनके तारीख 9-3-98 के पत्र के साथ आयोग को भेजे गए थे । उक्त रिपोर्ट में, प्रथमतः, आर्थिक कार्य विभाग की भूमिका और चालू उदारीकृत आर्थिक परिवेश में उसकी परिवर्तित भूमिका अभिकथित की गई है । चूंकि, आर्थिक परिवेश का उदारीकरण सरकार की एक नीति है, अतः, विधि आयोग को उस पर कोई टीका-टिप्पणी नहीं करनी है । साथ ही यह उल्लेख करना आवश्यक है कि उदारीकरण में, देश की आर्थिक स्थिति से सरकार की पूर्ण उदासीनता अन्तर्वलित नहीं होनी चाहिए और ऐसा नहीं हो सकता है । वर्ष 1991-92 तक भारतीय अर्थनीति, जैसा कि कहा जा सकता है, " कमांड अर्थनीति " थी, जहां कमांड किए जाने वाले स्थान पब्लिक सेक्टर द्वारा भरे गए अनुमानित थे । प्राइवेट सेक्टर निकटतः विनियमित था और उसे, कदाचित्, प्रायः या समय-समय पर अधिनियमित विभिन्न अधिनियमितियों में अंतर्विष्ट अनेक निबंधनों के अधीन रहते हुए, कार्य करना पड़ता था । संभवतः, आधुनिक विश्व के आर्थिक परिदृश्य में, भारत के लिए बाजार अभिमुख अथवा जिसे बाजार मैत्री आर्थिक नीतियां कहा जा सकता है, अपनाने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था, हट जाना अपरिहार्य था । किन्तु इस देश में और साथ ही पूर्ववर्ती कम्युनिस्ट राज्यों में हुए अनुभव के आधार पर, यह कहा जा सकता है कि पूर्णतः नियंत्रित और आरक्षित अर्थनीति से किसी बाजार मैत्री या उदारीकृत आर्थिक नीति में इस प्रकार हट पाना किसी अचानक झटके से नहीं हो सकता है । ऐसा एक क्रमिक प्रक्रिया से ही संभव है । विभिन्न बड़े पैमाने पर हुई वित्तीय

अनियमितताएं, जो वर्ष 1993 से 1997 तक के दौरान प्रकाश में आईं, संभवतः, अन्य कारणों के मध्य, ऐसे आकस्मिक बदलाव के लिए उत्तरदायी है। जबकि ऐसे नियंत्रणों का हटाया जाना जो उत्पादन बढ़ाने में और उद्योगों की प्रगति में रुकावटों के रूप में कार्य करते हैं, स्वागत योग्य है, सरकार अर्थनीति के विनियामक के रूप में, अपनी भूमिका का त्याग नहीं कर सकती है। वह उद्योगों के स्थापन के विषय में और/या औद्योगिक उत्पादों के मानक और क्वालिटी बनाए रखने के विषय में भी, इसकी भूमिका वांछनीय है और केवल उसी के द्वारा निभाई नहीं जा सकती है। निर्यात और आयात नीतियों पर निरन्तर निगरानी रखी जानी है और उन्हें स्वस्थ अर्थनीति के हित में निरन्तर मानीटर और विनियमित किया जाना है, और यह सरकार द्वारा किया जा सकता है और किया जाना चाहिए। पारदर्शी आर्थिक विधियों और प्रक्रियाओं का स्वागत है किन्तु साथ ही, वन उत्पादों, अनवीकरणीय और अक्षयणीय प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर उद्योगों की और साथ ही ऐसे उद्योगों की, जो गंभीर पर्यावरण संबंधी पारिस्थितिकी समस्याओं को जन्म दे रहे हैं, स्थापना राष्ट्र के व्यापक हित में, जिसके अंतर्गत बनाए रखने योग्य विकास और अन्तर उत्पादक सामंजस्य भी है, विनियमित किया जाना है। वर्ष 1994-से 97 के दौरान किए गए उच्चतम न्यायालय के अनेक निर्णयों में उपर्युक्त सिद्धांतों को स्पष्ट किया गया है।

अब, आर्थिक कार्य विभाग के प्रस्तावों/उत्तरों पर पुनः विचार करते समय, आर.के.गुप्ता समिति रिपोर्ट, 1994 (अध्याय 3) के प्रति एक निर्देश किया गया है जिसमें विभाग द्वारा प्रशासित किए जाने वाले परिनियमों के विभिन्न उपबंधों का संशोधन करने के लिए अनेक सिफारिशें अंतर्विष्ट हैं। यह कहा गया है कि "गुप्ता समिति की अधिकतर सिफारिशें पहले ही विभाग द्वारा कार्यान्वित की जा चुकी हैं"। विषय के इस दृष्टिकोण से, आर.के.गुप्ता समिति की रिपोर्ट के अध्याय 5 में उल्लिखित सिफारिशों पर टीका-टिप्पणी करने से कोई प्रयोजन पूरा नहीं होगा।

इसके पश्चात्, विभाग द्वारा भेजे गए प्रस्तावों में, विभाग से संबंधित अधिनियमों, नियमों और विनियमों के पुनर्विलोकन के लिए वित्त सचिव की अध्यक्षता में 5 नवम्बर, 1997 को गठित नए विशेषज्ञ समूह द्वारा किए गए प्रस्तावों की बात की गई है। यह कहा गया है कि कार्य को शीघ्र पूरा करने के लिए, उक्त नए विशेषज्ञ समूह ने, श्री विनोद ढल, अपर सचिव (बीमा) की अध्यक्षता में, एक उप समिति गठित की थी जिसमें कुछ अशासकीय सदस्य भी थे। बताया गया है कि उक्त समिति ने, अपनी रिपोर्ट 18-12-97 को प्रस्तुत की थी जिसे अपनी अंतिम बैठक में अंतिम रूप दिया गया था। विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों को मोटे तौर पर चार शीर्षों के अधीन वर्गीकृत किया जा सकता है जैसा कि पूर्ववर्ती अध्याय के पैरा 2.1 में कहा गया है और उन्हें यहां पुनः उद्धृत किया जा रहा है :-

(i) ऐसे अधिनियम जिनमें किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है ;

(ii) ऐसे अधिनियम, जिन्हें निरसित किया जाना अपेक्षित है ;

(iii) ऐसे अधिनियम, जिन्हें आशोधित किया जाना और एक अधिनियमिति के रूप में पुनः अधिनियमित किया जाना अपेक्षित है ; और

(iv) ऐसे अधिनियम जिनमें परिवर्तन अभी भी विचाराधीन है।

(i) जहां तक ऊपर मद (i) में उल्लिखित अधिनियमों का संबंध है, आयोग को स्पष्टतः कोई टीका-टिप्पणी नहीं करनी है।

(ii) इस मद के अधीन, निम्नलिखित अधिनियम निरसित किए जाने के लिए प्रस्तावित हैं :-

(क) बैंककारी सेवा आयोग अधिनियम, 1984

यह कहा गया है कि अधिनियम द्वारा विवक्षित बैंककारी सेवा आयोग का गठन नहीं किया गया था और पब्लिक सेक्टर बैंकों की क्रियात्मक स्वायत्तता को बढ़ाने के विनिश्चय को देखते हुए, ऐसे आयोग का गठन किए

जाने का प्रस्ताव नहीं है । इस अधिनियम के निरसन का विनिश्चय, नीति संबंधी विनिश्चय होने के कारण , कोई टीका-टिप्पणी अपेक्षित नहीं है ।

(ख) करेंसी अध्यादेश, 1940

यह कहा गया है कि एक रुपए मूल्य वाले नोटों का मुद्रण चूंकि अब बंद कर दिया गया है, अतः, यह अध्यादेश अब अपेक्षित नहीं है, विभाग का अभिमत संतोषजनक प्रतीत होता है ।

(ग) पोत परिवहन विकास निधि समिति (उत्सादन)अधिनियम,1986

यह अधिनियम वाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम, 1958 के अधीन गठित पोत परिवहन विकास निधि समिति को उत्सादित करने और उसकी निधियों , आस्तियों और दायित्वों का निपटान करने के लिए अधिनियमित किया गया था । चूंकि, अधिनियम का उद्देश्य पहले ही प्राप्त कर लिया गया है और अधिनियम के अधीन और कुछ किया जाना शेष नहीं है और तदनुसार यह उचित ही है कि इसे निरसित कर दिया जाए ।

(घ) अनिवार्य निक्षेप स्कीम अधिनियम, 1963 और अतिरिक्त उपलब्धियां (अनिवार्य निक्षेप) अधिनियम, 1974

अनिवार्य निक्षेप स्कीम, धारा 2 में उल्लिखित प्रत्येक व्यक्ति से यह अपेक्षा करने के लिए अधिनियमित की गई थी कि वे प्रत्येक वर्ष कुछ अनिवार्यतः निक्षेप करें । अतिरिक्त उपलब्धियां (अनिवार्य निक्षेप) अधिनियम, 1974 में दो पृथक् खातों और अतिरिक्त मंहगाई निक्षेप खाता का उपबंध किया गया था जिनमें धारा 3 में उल्लिखित व्यक्तियों को निक्षेप करना था । वस्तुतः निक्षेप वितरण प्राधिकारी द्वारा किए जाने थे । इन अधिनियमितियों के निरसन के प्रस्ताव के समर्थन में, आर्थिक कार्य विभाग द्वारा

भेजे गए प्रस्तावों में कोई कारण नहीं दिए गए हैं । तथापि, सम्पर्क किए जाने पर, विधि आयोग को बताया गया था कि विभाग यह नहीं समझता कि भविष्य में ऐसे अनिवार्य निक्षेपों के लिए कोई अवसर या आवश्यकता पड़ेगी । इसी कारण से यह कहा गया था कि इन अधिनियमों को निरसित किए जाने का प्रस्ताव है जबकि निरपवादतः संबंधित अधिनियमितियों के अधीन, पहले से ही, निक्षिप्त रकम के व्ययन के लिए उपबंध किए जाने चाहिए । चूंकि ऐसी अधिनियमितियों का निरसन, कलेवर, नीति का विषय प्रतीत होता है अतः, विधि आयोग को कोई विशिष्ट टीका-टिप्पणी नहीं करनी है ।

(iii)(क) सरकारी बचत बैंक अधिनियम, 1873, सरकारी बचत पत्र अधिनियम, 1959 और लोक भविष्य-निधि अधिनियम, 1968 को आमेलित करने और उनके बदले एक अधिनियम बनाने का प्रस्ताव स्वागत योग्य है । 1873 के अधिनियम का मुख्य प्रयोजन यह उपबंध करने का है कि निक्षेपकर्ता द्वारा किया गया नामनिर्देशन, मृत्यु किसी विधि या किसी अन्य स्थिति के, चाहे वह वसीयती हो या अन्यथा के होते हुए भी, अभिभावी रहना चाहिए । नामनिर्देशिती निक्षेपकर्ता की मृत्यु पर रकम पाने का हकदार है ।इसी प्रकार 1959 के अधिनियम में यह उपबंध है कि किसी प्रमाणपत्र के धारक द्वारा नामनिर्देशन, किसी अन्य परिस्थिति पर अभिभावी होना चाहिए । निःसंदेह कुछ अन्य उपबंध भी किए गए हैं । 1968 का अधिनियम निःसंदेह लोक भविष्य निधि स्कीम, उसमें अभिदाय और उससे निकाले जाने की रीति और साथ ही संदेय ब्याज के लिए उपबंध करता है । अधिनियम यह भी उपबंध करता है कि नामनिर्देशन की दशा में, नामनिर्देशिती , किसी अन्य परिस्थिति के होते हुए भी, निक्षेपकर्ता की मृत्यु पर रकम पाएगा । यह उचित होगा कि ये अधिनियमितियां, इन तीनों अधिनियमितियों द्वारा व्ययकृत विषय वस्तुओं के लिए उपबंध करते हुए, एक समेकित अधिनियम बनाए जाने के पश्चात् निरसित की जाएं ।

यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि विभिन्न उच्च न्यायालयों के बीच इस बात पर मत वैभिन्य था कि नामनिर्देशिती किसी पालिसी के अधीन संदेय रकम बीमाकृत मृतक के वारिसों के अपवर्जन में फायदाग्राही के रूप में पाने का हकदार था अथवा क्या नामनिर्देशिती, बीमाकृत विधिक वारिसों की ओर से संगृह करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति मात्र था । यह विवाद सरबती देवी के मामले में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय द्वारा सुलझा दिया गया था । (ए०आई०आर० 1984 एस०सी० 346), जिसमें बाद वाला अभिमत माना गया था कि नामनिर्देशिती, विधिक वारिसों के फायदों के लिए रकम एकत्रित करने मात्र के लिए सशक्त है । इस विधिक स्थिति के संदर्भ में, विधि आयोग ने, अपनी "फायदाग्राही के भविष्य निधि दावों को सुलझाने में अनावश्यक विलंब द्वारा कारित कठिनाईयों से मुक्ति दिलाने के साथ अम्बुड्स मैन के पद का सृजन करने और विधायी प्रशासनिक उपाय परिकल्पित करने की आवश्यकता" से संबंधित अपनी 137वीं रिपोर्ट के अध्याय 5 में, कर्मचारी भविष्य निधि और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1952 तथा उसके अधीन विरचित स्कीमों के अधीन, नामनिर्देशिती की प्रास्थिति पर विचार किया था और इस विवाद को सुलझाने के लिए तीन विकल्पों का सुझाव दिया था ।

फिर भी, आयोग ने, तीसरे विकल्प को अपनाने को अधिमान दिया था क्योंकि यह न्यायोचित और निष्पक्ष प्रतीत होता था कि कर्मचारी, "नामनिर्देशन" करके क्या करने जा रहा है और उसमें क्या परिणाम होंगे, इसके प्रति पूर्णतः जागरूक और चैतन्य होगा । आयोग द्वारा सिफारिश किया गया उक्त तीसरा विकल्प नीचे उद्धृत है :-

> "तीसरी बात जो अपने आप में प्रशंसनीय है, एक ऐसा कानूनी उपबंध बनाना है, जो किसी कर्मचारी को इस बात के लिए समर्थ बनाए कि वह नामनिर्देशन करते समय, आवेदन में ही लिखित रूप में यह स्पष्ट बयान कर सके कि या तो वह यह चाहता है कि "नामनिर्देशिती रकम व्यक्तिशः अपने निजी, अधिकार में प्राप्त करेगा" या यह कि "नामनिर्देशिती इसे एकत्रित करेगा और ... मेरे कुटुम्ब के सदस्यों को संदाय करेगा ......"

हम यह सिफारिश करते हैं कि प्रस्तावित अधिनियमिति में स्पष्टता के लिए ऐसा उपबंध अपनाया जाना चाहिए ।

(iii)(ख) इसी प्रकार, भारतीय सिक्का निर्माण अधिनियम, 1906, धातु सिक्का अधिनियम, 1889 और खोटे सिक्के (अपराध) अधिनियम, 1971 को आमेलित करने और उन के स्थान पर एक समेकित अधिनियम लाने का प्रस्ताव एक स्वागत योग्य प्रस्ताव है । भारतीय सिक्का निर्माण अधिनियम, सरकार से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति द्वारा रकम के रूप में प्रयोग किए जाने के लिए तांबा, कांसा या किसी अन्य धातु के किसी टुकड़े के निर्माण प्रतिषिद्ध करता है । धातु सिक्का निर्माण अधिनियम टकसालों की स्थापना के लिए, ऐसी टकसालों में सिक्कों को ढालने तथा अन्य आनुषंगिक विषयों के लिए उपबंध करता है । खोटे सिक्के (अपराध) अधिनियम, खोटे सिक्कों को पिघलना या नष्ट किया जाना रोकने के लिए और साथ ही पिघलाने और नष्ट करने के प्रयोजन के लिए खोटे सिक्कों को एकत्रित करना रोकने के लिए अधिनियमित किया गया था । यह अधिनियम सिक्कों की अत्यधिक कमी को पूरा करने के लिए बनाया गया था । ये तीनों अधिनियम सुविधापूर्वक एक अधिनियम में मिलाए जा सकते हैं ।

(iii)(ग) जहाँतक वैध निविदा (अंतर्लिखित नोट) अधिनियम, 1964 का संबंध है इसे वर्तमान रूप में बनाए रखने का प्रस्ताव है और विधि आयोग को इस पर कोई टीका-टिप्पणी नहीं करनी है ।

(iv) न्यास अधिनियम पर विचार करने से पूर्व, जिसके विषय में कहा गया है कि संशोधन अभी भी विचाराधीन है, विधि आयोग (भारतीय) न्यास अधिनियम, 1882 की धारा 20 के खंड (क) से (ङ) तक के निरसन के प्रस्ताव पर विचार कर सकता है । धारा 20 ऐसी स्थिति के लिए उपबंध

करती है जहां न्यास सम्पत्ति रकम के रूप में है, किन्तु उसे तत्काल या किसी पूर्ववर्ती तारीख पर न्यास के प्रयोजनों के लिए उपयोजित नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में, न्यासी को, खंड (क) से (च) तक में उल्लिखित किन्हीं प्रतिभूतियों में रकम का विनिधान करने की बाध्यता के अधीन रखा गया है। अब, आर्थिक कार्य विभाग का यह कहना है कि खंड (क) से (ड) तक अनावश्यक हो गए हैं, साथ ही विभाग का कहना है कि वे विधि विभाग से संबद्ध हैं। विधि आयोग इस बात को मान पाने में असमर्थ है कि ऐसा क्यों कहा जा सकता है कि खंड (क) से (ड) तक अनावश्यक हो गए हैं और उन्हें निरसित किया जाना अपेक्षित है। यह सत्य है कि दृष्टांत के रूप में, धारा 20 का खंड (क) "किसी राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार या ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड की यूनाइटेड किंगडम के प्रामिसरी नोट, डिबेंचर, स्टाक या अन्य प्रतिभूतियों में" विनिधान की बात करता है। यह नहीं कहा गया है कि ऐसे प्रामिसरी नोट आदि, राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार द्वारा जारी किए गए थे। यूनाइटेड किंगडम के प्रामिसरी नोट इसलिए निर्दिष्ट किए गए हैं कि यह अधिनियम, 1882 का है। यह कहा जाना एक बात है कि इन खंडों में यूनाइटेड किंगडम की या किसी अन्य विदेशी सरकार की प्रतिभूतियों, डिबेंचरों, स्टाक आदि के इन खंडों में निर्देश निरसित किए जा सकते हैं किन्तु यह कहना एक सम्पूर्णतः भिन्न बात है कि सभी खंड (क) से (ड) तक निरसित किए जाने हैं। किसी और सामग्री के अभाव में, आयोग धारा 20 के खंड (क) से (ड) तक पूर्णतः निरसित किए जाने के प्रस्ताव से सहमत होने की स्थिति में नहीं है। फिर भी, उसमें समुचित संशोधनों पर, जैसा ऊपर उल्लिखित है, विचार किया जा सकता है।

विभाग की रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि फेरा को फेमा से प्रतिस्थापित करने के लिए आवश्यक कदम उठाए जा चुके हैं। किन्तु यह विषय सरकार की नीतियों से निकटतः संबद्ध है और इस कारण से भी कि फेमा की प्रति आयोग को उपलब्ध नहीं कराई गई है, कोई मत व्यक्त कर पाना संभव नहीं है।

आर्थिक कार्य विभाग की रिपोर्ट में यह और कहा गया है कि ऐसे अन्य अधिनियमों के संशोधन, जो विभाग द्वारा कार्यान्वित किए जा रहे हैं, विशेषज्ञ समूह के विचाराधीन हैं।

अन्य विषयों के मध्य रिपोर्ट में यह कथन है कि विद्यमान रुग्ण औद्योगिक कंपनी (विशेष उपबंध) अधिनियम, 1985 के स्थान पर एक नया विधेयक " रुग्ण औद्योगिक कंपनी (विशेष उपबंध) विधेयक, 1997 " लोक सभा में 16 मई, 1997 को पुर:स्थापित किया गया था । यह कहा गया है कि उक्त विधेयक इस विषय पर प्राप्त विभिन्न सुझावों पर, जिनके अंतर्गत गोस्वामी समिति की रिपोर्ट भी है, विचार करते हुए, तैयार किया गया था । यद्यपि, विधेयक की प्रति, विधि आयोग को उपलब्ध नहीं कराई गई थी फिर भी, उसकी एक प्रति अभिप्राप्त कर ली गई है और उसका अनुशीलन किया गया है।यह सत्य है कि कुछ बातों में प्रस्तावित अधिनियम में, वर्तमान अधिनियम से सुधार हैं किन्तु मूल स्कीम वही बनी हुई है । विधेयक की धारा 28 , जो वर्तमान अधिनियम की धारा 22 की तत्स्थानी है, विधिक कार्यवाहियों, वसूलियों और अन्य संविदागत दायित्वों के स्वत: निलंबन के लिए उपबंध नहीं करती है (जैसा कि वर्तमान अधिनियम की धारा 22 द्वारा उपबंधित है) और यह बोर्ड को, पक्षकारों की सुनवाई के पश्चात् और यदि मामले की परिस्थितियों की ऐसे आदेश के लिए मांग है जो उक्त आशय के आदेश पारित करने के लिए सशक्त करती है । विधेयक त्रिमार्गीय समाधान, अर्थात् पुनर्वास (किसी औद्योगिक उद्यम या चालू उद्यम का), विक्रय और परिसमापन के लिए उपबंध करता है और एक पक्ष भी है जिसका स्पष्टीकरण अपेक्षित है । धारा 1(4) में यह कथन है कि यह (अधिनियम प्रथमत:, पोतों और शक्ति चालित अन्य जलयानों से संबंधित अनुसूचित उद्योगों से भिन्न) सभी अनुसूचित उद्योगों को लागू होगा, विधेयक में दो अनुसूचियां हैं, पहली अनुसूची निष्ठा और गोपनीयता की घोषणा अधिकथित करती है जबकि दूसरी अनुसूची उन विषयों को अधिकथित करती है जिनके लिए औद्योगिक कंपनी की पुन: संरचना करते समय, उपबंध किया

जा सकता है, अन्य कोई अनुसूची नहीं है जिसमें उन उद्योगों का उल्लेख हो जिन्हें यह अधिनियम लागू किया जाना है। चाहे जैसा भी हो, वर्तमान अधिनियम और पूर्वोक्त विधेयक के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, विधि आयोग निम्नलिखित संप्रेक्षण करना आवश्यक समझता है :-

अनेक प्राइवेट/पब्लिक लिमिटेड कंपनियां लोक निधि की सहायता से आरंभ की जाती है और उसी की सहायता से बनी रहती है। यह महत्वपूर्ण नहीं है कि लोक निधि बैंकों (राष्ट्रीयकृत या अन्यथा) से प्राप्त होती है अथवा अन्य वित्तीय निकायों और लोक वित्तीय संस्थाओं से आती है। अनुभव से पता चलता है कि कुछ उद्यमी (व्यवसायी) इस स्थिति का शोषण करते हैं। वे कोई कंपनी, मुख्य रूप से लोक निधि की सहायता से आरंभ करते हैं, और फिर कुप्रबंध, अकुशल प्रबंध द्वारा या अधिकारियों की बेईमानियों से कंपनी को रुग्ण बना देते हैं। मामले की रिपोर्ट बी आई एफ आर को की जाती है और परिणाम यह होता है कि उनके विरुद्ध सभी वसूलियां तत्काल रोक दी जाती हैं। बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं को देय ऋणों की बात को छोड़ें, सरकार को देय करों की वसूली भी नहीं की जा सकती है। इस प्रकार की अमर्यादित छूट का परिणाम बैंकों/वित्तीय संस्थाओं के और साथ ही सरकार के प्रति घोर अन्याय होता है और औद्योगिक कंपनियों के भारसाधक व्यक्तियों में वित्तीय अनियमितता बढ़ती है। यह एक गंभीर विषय है जिसकी सरकार द्वारा नई उदारीकृत आर्थिक नीति के परिप्रेक्ष्य में जांच की जानी है, सरकार को प्रत्येक रुग्ण उद्योग को जीवित बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए। बाजार अर्थनीति के निहित सिद्धांतों में से एक सिद्धान्त यह है कि अकुशल और अव्यवहार्य उद्योगों को, अधिकाधिक लोक निधि देकर बनाए रखने की बजाए, उन्हें स्वाभाविक रूप से समाप्त होने देना चाहिए। अभी तक अपनाई जा रही नीति, अर्थात् प्रतिवर्ष लोक निधि की भारी रकम देकर अनेक केन्द्रीय और राज्य पब्लिक उपक्रमों

को बनाए रखने की विभिन्न अर्थशास्त्रियों द्वारा कठोर आलोचना की गई है। यह समझा जा सकता है कि किसी प्रमुख उद्योग को, जिसका अस्तित्व बना रहना राष्ट्र की अर्थव्यवस्था के लिए निर्णायक है, पुनर्जीवित किया जाना और बनाए रखना चाहिए, किन्तु प्रत्येक रुग्ण उद्योग को पुनः जीवित और पुनर्वासित करने की नीति, आधुनिक आर्थिक नीति के साथ संगत नहीं हो सकती है। यह स्मरण रखा जाए कि 1948 का अधिनियम उस समय अधिनियमित किया गया था जब शासन करने वालों का दर्शन पूर्णतः भिन्न था। आज शासक दर्शन वही नहीं है। वास्तव में, यदि राष्ट्रीयकृत बैंकों और 'अकृत्यकारी आस्तियों' - डूबत ऋण का एक उपनाम - पर विचार किया जाए तो यह निष्कर्ष निकलता है कि जितनी जल्दी पब्लिक सैक्टर (कुछ प्रमुख रक्षा और रक्षा संबद्ध उद्योगों को छोड़कर) प्राइवेट कर दिया जाए उतना ही वह देश और उसकी अर्थ नीति के लिए बेहतर होगा। कुछ राष्ट्रीयकृत बैंकों के डूबत ऋण हजारों करोड़ रुपए हो गए हैं जैसे कि इंडियन बैंक, जिसका डूबत ऋण, कहा जाता है, दो हजार करोड़ रुपए से अधिक है। इसलिए, विधि आयोग यह सिफारिश करता है कि वर्तमान अधिनियम के स्थान पर नया अधिनियम बनाने से पहले, इस सम्पूर्ण विषय पर एक नीति संबंधी निर्णय लिया जाए और फिर आवश्यक या समुचित अधिनियमिति बनाने के लिए कदम उठाए जाएं या इस रूप में सम्पूर्ण प्रयोग को ही समाप्त किया जाए।

3.2 वित्त मंत्रालय

(कंपनी कार्य विभाग) :-

विभाग के सचिव ने, अपने 9 मार्च, 1998 के पत्र में यह कहा है कि उन्होंने उनके विभाग द्वारा प्रशासित अधिनियमितियों के पुनर्विलोकन के लिए कोई विशेषज्ञ समूह गठित नहीं किया था। उन्होंने मात्र इतना ही कहा है कि वे कंपनी विधेयक, 1997 के संगत उपबंधों को शामिल करके कंपनी (राष्ट्रीय निधियों में दान) अधिनियम, 1951 को निरसित करना चाहते हैं।

साथ ही, पत्र से संलग्न संक्षिप्त टिप्पण में यह कहा गया है कि एकाधिकार/तथा अवरोधक व्यापारिक व्यवहार अधिनियम, 1969, चार्टर्ड अकाउंटेंट अधिनियम, 1949, लागत और संकर्म लेखाकार अधिनियम, 1959 में कुछ संशोधन किए जा रहे हैं। प्रस्तावित संशोधन विधि आयोग को नहीं भेजे गए हैं इसलिए जहां तक इस विभाग का संबंध है कोई टीका टिप्पणी नहीं की जा सकती।

3.3 <u>वित्त मंत्रालय (व्यय समन्वय) :-</u>

इस विभाग ने, उपदर्शित किया है कि वे किसी अधिनियम का स्वतंत्र रूप से प्रशासन नहीं कर रहे हैं और इसलिए किसी अधिनियमिति में किन्हीं संशोधनों का सुझाव देना उनके लिए उचित नहीं है।

3.4 <u>वाणिज्य मंत्रालय :-</u>

वाणिज्य मंत्रालय ने, अपने 16 मार्च, 1998 के पत्र में यह कहा है कि वे इन अधिनियमों का प्रशासन कर रहे हैं, अर्थात् :-

1. मसाला बोर्ड अधिनियम, 1986 (1986 का सं0 10)
2. रबड़ अधिनियम, 1947 (1947 का सं0 24)
3. चाय अधिनियम, 1953 (1953 का सं0 29)
4. काफी अधिनियम, 1942(1942 का सं07)
5. सामुद्रिक उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1972 (1972 का सं013)
6. तम्बाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 (1975 का सं0 4)
7. कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1985 (1986 का सं02)
8. शत्रु संपत्ति अधिनियम, 1968 (1968 का सं044)

9. निर्यात (क्वालिटी नियंत्रण और निरीक्षण) अधिनियम, 1963 (1963 का सं0 22)

10. विदेशी व्यापार (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1992 (1992 का सं0 22)

अंतिम दो अधिनियमितियों को छोड़कर, अन्य अधिनियमितियों में, वाणिज्य मंत्रालय के अपर सचिव और वित्त सलाहकार श्री डी0पी0बागची की अध्यक्षता में मंत्रालय द्वारा द्वारा गठित विशेषज्ञ समिति द्वारा सुझाव दिए गए हैं।यह भी कहा गया है कि संबद्ध प्रशासनिक अनुभागों को, संशोधन के लिए उक्त प्रस्तावों के संबंध में, जहां अपेक्षित हो, मंत्रिमंडल टिप्पण तैयार करने और आवश्यक कार्रवाई करने की सलाह दी गई है। विशेषज्ञ समिति द्वारा सुझाए गए संशोधनों की एक प्रति भी, उक्त पत्र के साथ आयोग को भेजी गई है। जैसा पहले बताया गया है, संशोधन व्यापक और सुविस्तृत हैं। संशोधनों का मुख्य उद्देश्य उदारीकृत और बाजार मैत्री अर्थ नीति के लक्ष्यों को प्राप्त करना है। उद्देश्य है सभी निर्बन्धनों को हटाना तथा संगत उद्योगों को खुले और अपने आप कार्य करने की अनुमति देना। न तो यह संभव है न ही वांछनीय - विधि आयोग का यह कार्य भी नहीं है - कि वह विशेषज्ञ समिति द्वारा सुझाए गए प्रत्येक संशोधन की वांछनीयता की जांच करने और अपना अभिमत दे। वर्तमान आयोग (15वां विधि आयोग) को गठित करने वाले निर्देश निबंधनों के अनुसार, इस प्रकार प्राप्त प्रस्तावों के व्यापक परिप्रेक्ष्य में जांच अपेक्षित है। वर्तमान विधि आयोग का गठन करने वाले आदेश का पैरा 4.1 (घ) , जहां तक वह संगत है, निम्नवत है :-

> " विभिन्न मंत्रालयों/विभागों में विशेषज्ञ समूहों द्वारा दिए गए पुनरीक्षण/संशोधन के सुझावों पर, उनके समन्वयन और सामंजस्यकरण की दृष्टि से, व्यापक परिप्रेक्ष्य में विचार करना । "

उपर्युक्त संदर्भ में, विवक्षित व्यापक परिप्रेक्ष्य में, विधि आयोग उपर पैरा 1.1 में उद्धृत अपने प्रथम निर्देश निबंधन के परिप्रेक्ष्य में और उसके व्यापक पाठन में, समझा जाता है कि वह आर्थिक उदारीकरण के विद्यमान परिवेश के आलोक में संशोधनों की जांच करे । उपर्युक्त दृष्टिकोण से, जांच करने पर विधि आयोग प्रस्तावित संशोधनों में से किसी को भी आक्षेपनीय नहीं पाता । फिर भी, आयोग अपनी इस टीका-टिप्पणी को (इस रिपोर्ट के पूर्व पैरा 3.1 में की गई टिप्पण) दुहराना चाहता है कि निबंधनों का हटाया जाना ठीक तो सकता है फिर भी, विनियम बने रहने चाहिए । दूसरे शब्दों में, निबंधनों और विनियमों के बीच सुविभेद किया जाना चाहिए । बाजार अर्थ व्यवस्था में भी, सरकार अर्थ व्यवस्था के विनियमन के अपने कार्य को त्याग नहीं सकती है । यह केवल निबंधन अधिरोपित नहीं कर सकती बल्कि सम्पूर्ण अर्थनीति का समग्र नियंत्रण और विनियमन भी, इसके अन्तर्गत औद्योगिक सेक्टर भी है, सरकार के हाथों होना चाहिए । राष्ट्रीय हित के संरक्षण और संवर्धन के लिए सरकार को औद्योगिक और वाणिज्यिक संस्थाओं, उनके स्थापन और कार्यकरण पर समग्र नियंत्रण का प्रयोग करना चाहिए । इसी को सरकार का विनियामक कृत्य कह सकते हैं

विधि आयोग, फिर भी, भारत सरकार का ध्यान कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात-विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1986 की अनुसूची के मद, 1,2, 4 और 9 के साथ पठित उक्त अधिनियम की धारा 19 की ओर आकर्षित कराना चाहता है । धारा 19 और अनुसूची की पूर्वोक्त मदें निम्नवत् हैं :-

> " 19(1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा अनुसूचित उत्पादों के आयात या निर्यात को या तो साधारणतया या विनिर्दिष्ट वर्गों के मामलों में प्रतिषिद्ध , निर्बन्धित या अन्यथा नियंत्रित करने का उपबंध कर सकेगी ।

(2) ऐसे सभी अनुसूचित उत्पाद, जिनको उपधारा (1) के अधीन किया गया कोई आदेश लागू होता है, ऐसे माल समझे जाएंगे जिनका निर्यात सीमाशुल्क अधिनियम, 1962(1962 का 52) की धारा 11 के अधीन प्रतिषिद्ध किया गया है और उस अधिनियम के सभी उपबंध तदनुसार प्रभावी होंगे ।

(3) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) के अधीन किए गए किसी आदेश का उल्लंघन करेगा तो वह, ऐसे किसी अभिहरण या शास्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, जिसके लिए वह उपधारा (2) द्वारा यथा लागू सीमाशुल्क अधिनियम, 1962 (1962 का 52) के उपबंधों के अधीन दायी हो, कारावास से, जिसकी अधिकतम अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, या दोनों से, दंडनीय होगा ।"।

अनुसूची

1. फलों, सब्जियों और उनके उत्पाद ।

2. मांस और मांस उत्पाद ।

4. दुग्ध उत्पाद ।

9. अनाज उत्पाद ।"

सम्पूर्ण देश में, सब्जियों, मांस और फलों की बढ़ती हुई कीमतों को , जो इन उत्पादों को जनसाधारण की पहुंच से दूर लिए जा रहा है, ध्यान में रखते हुए, यह उचित होगा कि सरकार सब्जी, मांस (गो मांस को छोड़कर) और फलों के निर्यात को पूर्णत: प्रतिषिद्ध करते हुए अधिसूचना जारी करे । ऐसा प्रतिषेध इन उत्पादों की उचित दरों पर उपलब्धता सुनिश्चित करेगा और उसी से समाज के निर्धन वर्ग के व्यक्ति उन्हें खरीदने और उनका उपभोग कर पाने

में समर्थ हो पाएगी । इस विषय पर एक पृथक रिपोर्ट सम्यक् क्रम में प्रस्तुत की जाएगी ।

3.5 वित्त मंत्रालय, राजस्व विभाग :-

मंत्रालय ने, अपनी 21-10-1997 के पत्र के माध्यम से विधि आयोग को यह सूचित किया था कि विभाग ने, अप्रचलित विधियों को पहचानने और विद्यमान अधिनियमितियों में आवश्यक संशोधनों के प्रयोजन के लिए एक विशेषज्ञ समूह गठित किया है । कहा गया था कि एक अंतरिम रिपोर्ट शीघ्र ही आयोग को भेजी जाएगी ।आयोग को 13-2-98 को यह कथन करते हुए, एक संसूचना प्राप्त हुई कि विशेषज्ञ समूह का यह सर्वसम्मत अभिमत है कि उक्त तीस अधिनियमों में से, जो विभाग द्वारा प्रशासित किए जा रहे हैं, निम्नलिखित छह अधिनियम निरसित किए जा सकते हैं:-

1. स्वापक संव्यवहार (प्रतिषेध) अधिनियम, 1988
2. केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क विधि (संशोधन और विधिमान्यकरण) अधिनियम, 1982
3. चीनी (विशेष उत्पाद शुल्क) अधिनियम, 1959
4. खनिज उत्पाद (अतिरिक्त उत्पाद शुल्क और सीमाशुल्क) अधिनियम, 1958
5 केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क (भुगतान छूट) अधिनियम, 1986 ; और
6. सीमा शुल्क और उत्पाद-शुल्क राजस्व अपील अधिकरण अधिनियम,1986

क्योंकि पूर्वोक्त छह अधिनियमों को निरसित किए जाने के संबंध में , चूंकि ऐसा कोई कारण नहीं बताया गया है कि पूर्वोक्त छह अधिनियमों को इस कारण से निरसित किया जाना अपेक्षित है, विधि आयोग ने, 4-3-98 का एक पत्र विभाग से,वे कारण पूछने के लिए भेजा जिनसे उक्त अधिनियम, उनकी राय में, निरसित किए जाने हैं । मंत्रालय ने अपने 8 अप्रैल, 1998

के पत्र द्वारा आयोग ने, यह सूचित किया है कि " बेनामी संव्यवहार (प्रतिषेध) अधिनियम, 1988 को इसलिए रद्द करने की सिफारिश की गई थी कि अब तक उक्त अधिनियम को प्रवृत्त करने के लिए कोई अधिसूचना जारी नहीं की गई है । " तथापि, सत्यापन पर आयोग को पता लगा है कि उपर्युक्त आधार सही नहीं है । तथ्यतः , अधिनियम की धारा 1(3) यह कहती है कि धारा 3,5 और 8 तुरंत प्रवृत्त होंगी और शेष उपबंध 19 मई, 1988 से प्रवृत्त हुए समझे जाएंगे । वास्तव में, इस अधिनियम के उपबंधों पर उच्चतम न्यायालय के दो विनिश्चय, अर्थात् मिथिलेश कुमारी (ए आई आर 1989 एस सी 1247) और आर राजगोपाल रेड्डी (ए आई आर 1996 एस सी 238) हुए हैं देखिए पैरा 5.1। इसलिए, आयोग, इस बात से सहमत नहीं हो सकता कि इस अधिनियम को निरसित किया जाना अपेक्षित है । वास्तव में, यह अधिनियम बहुत ही प्रशंसनीय उद्देश्य को पूरा करता है ।

चीनी (विशेष उत्पाद शुल्क) अधिनियम, 1959 केवल उन स्टाकों तक सीमित था, जो अधिनियम के प्रारंभ की तारीख पर उपलब्ध थे । इसका और कोई उपयोजन नहीं है । इसे, जैसा कि प्रस्ताव किया गया है, निरसित किया जा सकता है ।

जहां तक केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क विधि (संशोधन और विधिमान्यकरण) अधिनियम, 1982 का संबंध है, अधिनियम के उपबंधों के अनुशीलन पर, आयोग यह पाता है कि यह उस रीति का उपबंध करने के प्रयोजन के लिए, अधिनियमित किया गया था जिस रीति में " किसी उत्पाद शुल्क के उद्ग्रहण और संग्रहण का उपबंध करने वाली ऐसी प्रत्येक केन्द्रीय विधि, जो ऐसी सीमा विधि के अधीन शुल्क और उत्पाद शुल्क के उद्ग्रहण और संग्रहण के प्रति निर्देश द्वारा केन्द्रीय उत्पाद शुल्क अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंधों को लागू करती है " के अधीन छूट अधिसूचनाएं जारी की जानी चाहिए । अधिनियम पहले जारी की गई

ऐसी अनेक छूट अधिसूचनाओं के विधिमान्यकरण के लिए भी है, जिनमें उस अधिनियम के या उसके अधीन बनाए गए नियमों के संगत उपबंधों को उद्धृत या निर्दिष्ट न किया गया हो, जिनके अधीन या जिनके प्रति निर्देश से वे जारी की गई थीं । यह ज्ञात नहीं है कि क्या ऐसी छूट अधिसूचनाओं की बाबत कोई विवाद लंबित है जो इस अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (4) द्वारा विधिमान्य की गई है । जहां तक धारा 2 की उपधारा (2) और (3) का संबंध है वे केवल वह पद्धति और रीति विहित करती है जिसमें कतिपय केन्द्रीय विधियों (धारा 2 की उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट) के अधीन छूट अधिसूचनाएं जारी की जाएंगी । ऐसी परिस्थितियों में , इस बात से सहमत होना कठिन है कि यह अधिनियम और संस्थापन किए बिना निरसित किया जा सकता है । यदि सम्यक् संस्थापन पर यह पाया जाता है कि ऐसी अधिसूचनाओं की बाबत, जो धारा 2 की उपधारा (4) द्वारा विधिमान्य की गई थी , कोई विवाद या मुकदमेबाजी लंबित नहीं है, तभी यह अधिनियम निरसित किया जा सकता है ।

जहां तक खनिज उत्पाद (अतिरिक्त उत्पाद शुल्क और सीमा शुल्क) अधिनियम, 1958 का संबंध है, ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त अधिनियम एक सीमित अवधि, अर्थात् 1-4-1959 से आरंभ होने वाले और 31-10-1959 को समाप्त होने वाली अवधि से संबंधित था । इसलिए, यह अधिनियम एक विनिर्दिष्ट उपबंध के साथ निरसित किया जा सकता है कि उसके अधीन की गई कोई बात या कार्रवाई उचित या वैध बनी रहेगी । इसी प्रकार केन्द्रीय उत्पाद शुल्क (मुल्तवी छूट) अधिनियम, 1986एक विशिष्ट अवधि (3-3-86 से 8-8-86) के दौरान जारी की गई अधिसूचनाओं को मुल्तवी प्रभाव देने तक ही सीमित प्रतीत होता है । यह अधिनियम भी इस विनिर्दिष्ट उपबंध के अधीन रहते हुए, निरसित किया जा सकता है कि इसके अधीन की गई कोई बात या उसके अधीन की गई कोई कार्रवाई उचित और वैध बनी रहेगी ।

आयोग, सीमाशुल्क और उत्पादशुल्क राजस्व अपील अधिकरण अधिनियम, 1986 के निरसन के लिए दिए गए कारणों से सहमत है । उच्चतम न्यायालय के, एल० चन्द्र कुमार के मामले में, दिए गए निर्णय को देखतेहुए और इस कारण से भी कि अब मूल्यांकन और वर्गीकरण के मामलों से संबंधित सीमाशुल्क और उत्पादशुल्क राजस्व अपील अधिकरण अधिनियम, 1986 के आदेशों के विरुद्ध सीधे उच्चतम न्यायालय को अपील करने का उपबंध है, यह अधिनियम अनावश्यक कहा जा सकता है और इसे निरसित किया जा सकता है ।

3.6 (i) आपूर्ति विभाग

(ii) समुद्रिक विकास विभाग

(iii) अपारम्परिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय

उपर्युक्त तीनों विभागों ने, कहा है कि वे किसी अधिनियम का प्रशासन नहीं कर रहे हैं और इसलिए निरसन या संशोधन के लिए किसी प्रस्ताव को तैयार किए जाने का प्रश्न ही नहीं उठता । यद्यपि, आपूर्ति विभाग ने, महानिदेशक, आपूर्ति और निपटान द्वारा की गई संविदाओं से उत्पन्न होने वाले विवादों की मध्यस्थता के संचालन के विषय में कुछ व्यावहारिक कठिनाइयां बताई हैं । यद्यपि, बताई गई कठिनाइयां वास्तविक और अनिवार्य प्रतीत होती हैं, फिर भी, यह ऐसा विषय नहीं है जिस पर इस आयोग से कोई टिप्पणी करने की अपेक्षा की जाए ।

3.7 <u>इलेक्ट्रानिक विभाग :-</u>

इलेक्ट्रानिक विभाग ने, यह कहा है " ऐसा कोई विनिर्दिष्ट परिनियम नहीं है जो उक्त विभाग द्वारा, सभी सरकारी संगठनों को लागू साधारण नियमों और प्रक्रियाओं के अतिरिक्त, प्रशासित किया जा रहा हो " । यद्यपि, उन्होंने अपने 26-11-97 के पत्र में यह कहा है कि विभाग ने " पहले ही आवश्यकता के अनुसार, विभाग की राष्ट्रीय सूचना और संरचना (रा०सू०अ०)

योजना - 2000 पत्थान की है और रा०भू०के० स्थापित कर ली है । "कहा गया है कि अन्तर मंत्रालयी स्थायी समिति सभी संबद्ध पहलुओं का पुनर्विलोकन कर रही है और "उपरोक्त परिपत्र (स०प०) की बाबत विन्यास विज्ञापन " पर प्रारूप संकल्प में एक और उच्च स्तरीय अंतरमंत्रालयी उप समूह लगा हुआ है । इस विभाग द्वारा भेजे गए किसी विनिर्दिष्ट प्रस्ताव के अभाव में विधि आयोग द्वारा कोई टीका-टिप्पणी नहीं की जा सकती है ।

3.8 खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय :-

मंत्रालय ने, अपनी 6-10-1997 और 16 अक्तूबर, 1997 के पत्रों में यह कहा है कि वे चार अधिनियम / आदेशों का प्रशासन कर रहे हैं । जिनमें से धान-कुटाई उद्योग (विनियमन) अधिनियम, 1958 और धान कुटाई उद्योग (विनियमन और अनुज्ञापन) अधिनियम, 1959 पहले ही निरसित किए जा चुके हैं । तीसरा अधिनियम, एम०जे०ब्ल्यू०, 1981, पशुपालन विभाग को अंतरित कर दिया बताया गया है और चौथा, आवश्यक वस्तु अधिनियम के अधीन प्रख्यापित फलोत्पाद आदेश, 1955 भी संशोधित किया जा चुका है । तदनुसार, यह कहा गया है कि उक्त विभाग से कोई प्रस्ताव अपेक्षित नहीं है ।

3.9 शहरी कार्य और नियोजन मंत्रालय, शहरी नियोजन और निर्धनता उन्मूलन विभाग :-

27-10-97 के पत्र द्वारा यह बताया गया है कि उन्होंने विद्यमान विधियों का पुनर्विलोकन करने और रूपांतरणों का सुझाव देने के लिए एक विशेषज्ञ समूह गठित किया था और उनके प्रस्ताव, जैसे और जब अंतिम रूप लेंगे, विभाग को सूचित किए जाएंगे । विभाग ने, अपने 24-11-1997 के पश्चात्वर्ती पत्र में यह कहा है कि उपर्युक्त विषय पर यह कहना है कि जहां तक इस विभाग का संबंध है, सूचना शून्य मानी जाए ।

3.10 रसायन और उर्वरक मंत्रालय ;-उर्वरक विभाग :-

विभाग ने कहा है कि वे उर्वरक संचलन (नियंत्रण) आदेश, 1973 के सिवाय किसी अधिनियमिति का प्रशासन नहीं कर रहे हैं और उनमें कोई संशोधन विचाराधीन नहीं है।

3.11 परमाणु ऊर्जा विभाग :-

विभाग ने, अपने 18-11-1997 के पत्र में कहा है कि वे परमाणु ऊर्जा अधिनियम, 1962 और उसके अधीन बनाए नियमों और विनियमों का प्रशासन कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि वे कालिक: आंतरिक पुनर्विलोकन करते रहते हैं और जब कभी भी अपेक्षित हो, आंतरिक विनियम बना देते हैं। विभाग द्वारा निरसन या संशोधन के लिए कोई प्रस्ताव नहीं भेजा गया है।

3.12 संचार मंत्रालय, डाक विभाग :-

विभाग ने, अपने 17-11-1997 के पत्र में बताया है कि जहां तक भारतीय डाकघर अधिनियम, 1898 का संबंध है, 1992 में एक पुनर्विलोकन समिति गठित की गई थी जिसने अपनी रिपोर्ट जनवरी, 1993 में प्रस्तुत की थी। फिर, यह बताया गया है कि अधिनियम को " जहां अपेक्षित हो, कुछ संशोधनों के साथ " बनाए रखने का विनिश्चय किया गया है। तथापि, हमें कोई प्रस्ताव संसूचित नहीं किए गए हैं। यह भी कहा गया है कि दो अधिनियमितियां सरकारी बचत बैंक अधिनियम और सरकारी बचत पत्र अधिनियम भी हैं। किन्तु इन अधिनियमितियों में वित्त मंत्रालय के आर्थिक कार्य विभाग से प्राप्त सूचना के अनुसार, कार्य किया जाता है जिन्होंने इन दोनों अधिनियमों को लोक भविष्य निधि अधिनियम के साथ मिलाने का प्रस्ताव किया है। इस पहलू पर पहले ही, इस रिपोर्ट में अंयत्र विचार और टीका-टिप्पणी की जा चुकी है।

3.13 विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय :-

मंत्रालय ने, अपने 19-11-1997 के पत्र में बताया है कि वे केवल दो अधिनियमितियों, अर्थात् अनुसंधान और विकास उपकर अधिनियम, 1986 और प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड अधिनियम, 1995 से संबंधित कार्य कर रहे हैं। कहा गया है कि दोनों में से पहला अधिनियम हाल में ही 1995 में संशोधित किया गया है और चूंकि, दोनों अधिनियम आर्थिक उदारीकरण की वर्तमान स्थिति के अनुरूप हैं, अतः, संशोधनों के कोई प्रस्ताव नहीं भेजे गए हैं।

3.14 सूचना और प्रसारण मंत्रालय :-

मंत्रालय के तारीख 28-11-1997 के पत्र के अनुसार, चार अधिनियमों, अर्थात् (i) प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1867, (ii) प्रसार भारती अधिनियम, 1990, (iii) चलचित्र अधिनियम, 1952 और (iv) प्रेस परिषद् अधिनियम, 1978 का प्रशासन किया जा रहा है, जहां तक 1867 के अधिनियम का संबंध है, यह कहा गया है कि अधिनियम के संशोधनों की विधि मंत्रालय द्वारा जांच की जा चुकी है तथा इस प्रक्रम पर और पुनर्विलोकन अपेक्षित नहीं है। चलचित्र अधिनियम, 1952 की बाबत कहा गया है कि संशोधन पहले ही पुरःस्थापित किए जा चुके हैं और वह राज्य सभा में लंबित हैं। प्रेस परिषद् अधिनियम, 1978 के संबंध में, यह कहा गया है कि भारतीय प्रेस परिषद् ने कुछ संशोधन सुझाए हैं और विषय विचाराधीन है तथा इस निमित्त प्रस्ताव विधि आयोग को बाद में भेजे जाएंगे। प्रसार भारती अधिनियम, 1990 के संबंध में, यद्यपि पत्र में यह कहा गया है कि अधिनियम का और पुनर्विलोकन वर्तमान परिस्थिति में, आवश्यक नहीं है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तमान सरकार, अधिनियम के पुनर्विलोकन का प्रयत्न कर रही है। चाहे जैसा भी हो, इस प्रक्रम पर विधि आयोग से सिवाय यह कहने के कोई टीका-टिप्पणी अपेक्षित नहीं है कि, यथास्थिति, प्रसार भारती अधिनियम, 1990 में कोई संशोधन अधिनियमित करते समय अथवा

इस विषय पर नई अधिनियमिति लाते समय, संबद्ध अधिकारी, उच्चतम न्यायालय द्वारा सचिव, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार बनाम, बंगाल क्रिकेट एसोसिएशन और अन्य ए०आई०आर० 1945 एस सी 1236 में दिए गए निर्णयों में दी अभिव्यक्तियों का निकट से अध्ययन करके अच्छा करेंगे। उक्त अभिमत, विश्व के अनेक देशों में, प्रचलित होने वाली प्रसारण विधि का निर्देश करते हैं और भारतीय सांविधानिक विधि के परिप्रेक्ष्य में, विषय से संगत आधारिक संकल्पनाएं अधिकथित करते हैं।

अध्याय - 4

निष्कर्ष

4.1 पूर्ववर्ती अध्याय में अंतर्विष्ट विचार विमर्श के आधार पर, आयोग का यह सुविचारित अभिमत है कि केन्द्रीय सरकार के तत्संबंधी मंत्रालयों के प्रशासनिक नियंत्रण में आने वाली निम्नलिखित केन्द्रीय अधिनियमितियाँ हैं, यथास्थिति, संशोधन आवश्यक है, या उन्हें निरसित किया जाना अपेक्षित है, या आपेक्षित किया जाना और एक अधिनियमिति के रूप में पुनः अधिनियमित किया जाना अपेक्षित है या परिस्थितियों के संबंध में, इन अधिनियमितियों पर कोई राय नहीं दी जा सकती जो संबद्ध विभाग द्वारा अभी भी विचाराधीन है।

4.2 वित्त मंत्रालय, वार्षिक कार्य विभाग के अधीन आने वाली अधिनियमितियाँ

(क) केन्द्रीय सेवा आयोग अधिनियम :- इसको निरसित किए जाने का विनिश्चय, नीति संबंधी विनिश्चय होने के कारण, कोई टीका-टिप्पणी आवश्यक नहीं है।

[पैरा 3.1(ii)(क), पूर्वोक्त]

(ख) कौंसी अध्यादेश, 1940 :- इस अधिनियमिति के निरसन की सिफारिश की जाती है।

[पैरा 3.1(ii)(ख), पूर्वोक्त]

(ग) पौत परिवहन विकास निधि समिति (उत्सादन) अधिनियम, 1986 :- इस अधिनियम के निरसन की सिफारिश की जाती है।

[पैरा 3.1(ii)(ग), पूर्वोक्त]

अधिनियम

(घ) अनिवार्य निक्षेप स्कीम, 1963 और अतिरिक्त उपलब्धियां (अनिवार्य निक्षेप) अधिनियम, 1974 :- सरकार के नीति संबंधी विनिश्चय के आधार पर, इन अधिनियमितियों के निरसन की सिफारिश की जाती है।

(पैरा 3.1(ii)(घ), पूर्वोक्त)

(ङ) सरकारी बचत बैंक अधिनियम, 1873, सरकारी बचतपत्र अधिनियम, 1959 और लोक भविष्य निधि अधिनियम, 1968 : इन अधिनियमों का आमेलन और उनके स्थान पर समेकित एक अधिनियम के अधिनियमन की, संगत पैरा में किए गए संप्रेक्षणों के अधीन रहते हुए, सिफारिश की जाती है।

[पैरा 3.1(iii)(क), पूर्वोक्त]

(च) भारतीय सिक्का निर्माण अधिनियम, 1906, धातु सिक्का अधिनियम, 1889 और खोटे सिक्के (अपराध) अधिनियम, 1971 :- इन अधिनियमों के आमेलन और उनके स्थान पर समेकित एक अधिनियम को अधिनियमन की सिफारिश की जाती है।

(पैरा 3.1(iii)(ख) पूर्वोक्त]

(छ) बैंक निविदा (अंतर्लीखित नोट) अधिनियम, 1964 : विभाग द्वारा इस अधिनियम को बनाए रखने की सिफारिश की गई है। आयोग को उस पर कोई टीका-टिप्पणी नहीं करनी है।

(पैरा 3.1 (iii)(ग), पूर्वोक्त]

(ज) भारतीय न्यास अधिनियम, 1882 : अधिनियम के संशोधन, विभाग द्वारा अभी भी विचाराधीन बताए गए हैं। तथापि, आयोग किसी और सामग्री के अभाव में, धारा 20 के खंड (क) से (ङ) तक को पूर्णतः निरसित करने के विभाग के प्रस्ताव से सहमत नहीं है। तथापि, इन खंडों में यूनाइटेड किंगडम, या अन्य विदेशी सरकार की प्रतिभूतियां, कंपनी, स्टाक आदि के प्रति निर्देश निरसित किए जा सकते हैं।

चूंकि फेरा का फेमा द्वारा प्रतिस्थापन सरकार की नीति का विषय है और इस कारण भी कि फेमा की एक प्रति आयोग को उपलब्ध नहीं कराई गई है, कोई राय व्यक्त कर पाना संभव नहीं है।

आर्थिक कार्य विभाग की रिपोर्ट में यह कथन है कि ऐसे अन्य अधिनियमों के संशोधन, जो विभाग द्वारा कार्यान्वित किए जा रहे हैं, विशेषज्ञ समूहों के विचाराधीन हैं और जब और जैसे ही सुझाव दिए जाते हैं, वे आयोग को सूचित किए जाएंगे।

रुग्ण औद्योगिक कंपनी (विशेष उपबंध) अधिनियम, 1985 विधि आयोग यह सिफारिश करता है कि वर्तमान अधिनियम के स्थान पर कोई नया अधिनियम बनाए जाने के पूर्व इस सम्पूर्ण विषय पर एक नीति संबंधी विनिश्चय किया जाना चाहिए और तब आवश्यक तथा समुचित अधिनियमिति बनाने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए अथवा इस संपूर्ण कार्य को पूर्ण रूप में रोक देना चाहिए।

(पैरा 3.1(iv), पूर्वोक्त)

4.3 वित्त मंत्रालय, कंपनी कार्य विभाग : कंपनी (राष्ट्रीय निधियों को दान) अधिनियम, 1951 : विभाग ने केवल इतना ही कहा है कि वे कंपनी विधेयक, 1997 में संगत उपबंधों का समावेश करके अधिनियम को निरसित करने का प्रस्ताव करते हैं।

विभाग ने संक्षिप्त टिप्पणी में यह भी कहा है कि कुछ संशोधन - एम0 आर0टी0पी0 अधिनियम, 1969, चार्टर्ड अकाउंटेंट अधिनियम, 1949, लागत और ~~कार्य लेखाकार~~ संकर्म अकाउंटेंट अधिनियम, 1959 में कुछ और संशोधन किए जा रहे हैं। प्रस्तावित संशोधन, विधि आयोग को नहीं भेजे गए हैं। इसलिए, जहां तक इस विभाग का संबंध है कोई टीका-टिप्पणी नहीं की जा सकती।

(पैरा 3.2 पूर्वोक्त)

4.4 वित्त मंत्रालय (व्यय समन्वय) :-

इस विभाग ने, उपदर्शित किया है कि वे किसी अधिनियम का स्वतंत्र रूप से प्रशासन नहीं कर रहे और इसलिए किसी अधिनियमिति में किन्हीं संशोधनों का सुझाव देना उनके लिए उचित नहीं है ।

(पैरा 3.3, पूर्वोक्त)

4.5 वाणिज्य मंत्रालय

1. मसाला बोर्ड अधिनियम, 1986 (1986 का सं010)
2. रबड़ अधिनियम, 1947 (1947 का सं024)
3. चाय अधिनियम, 1953 (1953 का सं0 29)
4. काफी अधिनियम, 1942(1942 का सं0 7)
5. सामुद्रिक उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1972 (1972 का सं0 13)
6. तम्बाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 (1975 का सं0 4)
7. कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1985 (1986 का सं0 2)
8. शत्रु संपत्ति अधिनियम, 1968 (1968 का सं0 44)
9. निर्यात (क्वालिटी नियंत्रण और निरीक्षण) अधिनियम, 1963(1963 का सं0 22)
10. विदेशी व्यापार (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1992 (1992 का सं0 22)

अंतिम दो अधिनियमितियों को छोड़कर, अन्य अधिनियमितियों में, मंत्रालय द्वारा गठित विशेषज्ञ समिति द्वारा सुझाव दिए गए हैं । आयोग किसी भी प्रस्तावित संशोधन को आवश्यक नहीं पाता है । फिर भी, आयोग अपनी इस टीका-टिप्पणी को (जो इस रिपोर्ट के आरंभ में की गई है)

दुहराना चाहता है कि निर्बन्धों को हटाया जाना ठीक हो सकता है, फिर भी (निदेशन और) विनियमन (केन्द्रीय कार्य) की रखनी चाहिए। बाजार अर्थव्यवस्था में भी सरकार अर्थव्यवस्था के विनियमन के अपने कार्य को त्याग नहीं सकती है। वह केवल निर्बन्धन अधिरोपित नहीं कर सकती बल्कि सम्पूर्ण अर्थनीति का समग्र नियंत्रण और विनियमन भी, इसके अन्तर्गत औद्योगिक सेक्टर भी है, सरकार के हाथों होना चाहिए। राष्ट्रीय हित के संरक्षण और संवर्धन के लिए, सरकार को औद्योगिक और वाणिज्यिक संस्थापनों, उनके स्थापन और कार्यकरण पर समग्र नियंत्रण का प्रयोग करना चाहिए। इसी को सरकार का विनियामक कृत्य कह सकते हैं।

विधि आयोग, फिर भी, भारत सरकार का ध्यान कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात-विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1986 की अनुसूची के मद, 1,2,4 और 9 के साथ पठित उक्त अधिनियम की धारा 19 की ओर आकर्षित कराना चाहता है। धारा 19 और अनुसूची की पूर्वोक्त मदें निम्नवत् हैं :-

"19(1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा अनुसूचित उत्पादों के आयात या निर्यात को या तो साधारणतया या विनिर्दिष्ट वर्गों के मामलों में प्रतिषिद्ध, निर्बन्धित या अन्यथा नियंत्रित करने का उपबंध कर सकेगी।

(2) ऐसे सभी अनुसूचित उत्पाद, जिनको उपधारा (1) के अधीन किया गया कोई आदेश लागू होता है, ऐसे माल समझे जाएंगे जिनका निर्यात सीमाशुल्क अधिनियम, 1962 (1962 का 52) की धारा 11 के अधीन प्रतिषिद्ध किया गया है और उस अधिनियम के सभी उपबंध तदनुसार प्रभावी होंगे।

(3) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) के अधीन किए गए किसी आदेश का उल्लंघन करेगा तो वह, ऐसे किसी अधिहरण या शास्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, जिसके लिए वह उपधारा (2) द्वारा यथा लागू सीमाशुल्क अधिनियम, 1962 (1962 का 52) के उपबंधों के अधीन दायी हो, कारावास से, जिसकी

अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, या दोनों से, दंडनीय होगा ।"

" अनुसूची

1. फलों, सब्जियों और उनके उत्पाद

- - - - -

2. मांस और मांस उत्पाद

- - - -

4. दुग्ध उत्पाद

----

9. खाद्य उत्पाद ।"

सम्पूर्ण देश में, सब्जियों, मांस और फलों की अत्यधिक कमी और आसमान छूते बढ़ती कीमतों को, जो इन उत्पादों को जनसाधारण की पहुंच से दूर किए जा रहा है, ध्यान में रखते हुए, यह उचित होगा कि सरकार सब्जी, मांस (गौ मांस को छोड़कर) और फलों के निर्यात को पूर्णतः प्रतिषिद्ध करते हुए, अधिसूचना जारी करे । ऐसा प्रतिषेध उत्पादों की उचित दरों पर उपलब्धता सुनिश्चित करेगा और उसी से समाज के निर्धन वर्ग के व्यक्ति उन्हें खरीदने और उनका उपभोग कर पाने में समर्थ हो पाएंगे । इस विषय पर एक पृथक् रिपोर्ट सम्यक् क्रम में प्रस्तुत की जाएगी ।

(पैरा 3.4, फुटनोट)

4.6 वित्त मंत्रालय, राजस्व विभाग :-

तीस अधिनियमों (जो विभाग द्वारा प्रशासित किए जा रहे हैं) में से विभाग ने, यह मत व्यक्त किया कि निम्नलिखित कुछ अधिनियम निरसित किए जा सकते हैं :-

1. बेनामी संव्यवहार (प्रतिषेध) अधिनियम, 1988
2. केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क विधि (संशोधन और विधिमान्यकरण) अधिनियम, 1982

3. चीनी (विशेष उत्पाद शुल्क) अधिनियम, 1969
4. खनिज उत्पाद (अतिरिक्त उत्पाद-शुल्क और सीमाशुल्क) अधिनियम, 1958
5. केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क (मुक्तकारी छूट) अधिनियम, 1986 , और
6. सीमाशुल्क और उत्पाद शुल्क राजस्व अपील अधिकरण अधिनियम,1986

बेनामी संव्यवहार (प्रतिषेध) अधिनियम, 1988

मंत्रालय ने आयोग को अपने 8 अप्रैल, 1988 के पत्र द्वारा यह सूचित किया है कि " बेनामी संव्यवहार(प्रतिषेध) अधिनियम, 1988 को इसलिए रद्द करने की सिफारिश की गई थी कि अब तक उक्त अधिनियम को प्रवृत्त करने के लिए कोई अधिसूचना जारी नहीं की गई थी । " तथापि, सत्यापन पर आयोग को पता लगा है कि उपर्युक्त आधार सही नहीं है । वस्तुतः अधिनियम की धारा 1(3) यह कहती है कि धारा 3,5 और 8 तुरंत प्रवृत्त होंगी और शेष उपबंध 19 मई, 1988 से प्रवृत्त हुए समझे जायेंगे । इसलिए, आयोग इस बात से सहमत नहीं हो सकता कि इस अधिनियम को निरसित किया जाना अपेक्षित है ।

(पैरा 3.5, पूर्वोक्त)

केन्द्रीय उत्पाद शुल्क विधि (संशोधन और विधिमान्यकरण)अधिनियम,1982 :

इस बात से सहमत होना कठिन है कि यह अधिनियम और सत्यापन किए बिना निरसित किया जा सकता है । यदि सम्यक् सत्यापन पर यह पाया जाता है कि ऐसी अधिसूचनाओं की बाबत, जो धारा 2 की उपधारा (4) द्वारा विधिमान्य की गई थी, कोई विवाद या मुकदमेबाजी लंबित नहीं है, तभी यह अधिनियम निरसित किया जा सकता है ।

(पैरा 3.5, पूर्वोक्त)

चीनी (विशेष उत्पाद शुल्क) अधिनियम, 1969

यह अधिनियम केवल उन स्टाकों तक सीमित था जो अधिनियम के प्रारंभ की तारीख पर कारखानों में उपलब्ध थे । इसका और कोई उपयोजन नहीं है । जैसा कि विभाग द्वारा सुझाव दिया गया है, इसे निरसित किया जा सकता है ।
(पैरा 3.5, पूर्वोक्त)

खनिज उत्पाद (अतिरिक्त उत्पाद शुल्क और सीमाशुल्क) अधिनियम, 1958 :

यह अधिनियम एक विनिर्दिष्ट उपबंध के साथ निरसित किया जा सकता है कि इसके अधीन की गई कोई बात या कार्रवाई उचित और वैध मानी जाएगी ।

(पैरा 3.5, पूर्वोक्त)

केन्द्रीय उत्पाद शुल्क (मुकदमों छूट) अधिनियम, 1986

यह अधिनियम भी इस विनिर्दिष्ट उपबंध के अधीन रखते हुए, निरसित किया जा सकता है कि इसके अधीन की गई कोई बात या उसके अधीन की गई कोई कार्रवाई उचित और वैध बनी रहेगी ।

(पैरा 3.5, पूर्वोक्त)

सीमाशुल्क और उत्पादशुल्क राजस्व अपील अधिकरण अधिनियम, 1986

आयोग, सीमाशुल्क और उत्पादशुल्क राजस्व अपील अधिकरण अधिनियम, 1986 के निरसन के लिए दिए गए कारणों से सहमत है । उच्चतम न्यायालय के, एस० चन्द्र कुमार के मामले में दिए गए निर्णय को देखते हुए और इस कारण से भी कि अब मूल्यांकन और वर्गीकरण के मामले से संबंधित सीमाशुल्क और उत्पादशुल्क राजस्व अपील अधिकरण अधिनियम, 1986 के आदेशों के विरुद्ध सीधे उच्चतम न्यायालय को अपील करने का उपबंध है, यह अधिनियम अनावश्यक कहा जा सकता है और इसे निरसित किया जा सकता है ।

(पैरा 3.5, पूर्वोक्त)

4.7. आपूर्ति विभाग, सामुद्रिक विकास विभाग : अपारम्परिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय :

इन विभागों ने कहा है कि वे किसी अधिनियम का प्रशासन नहीं कर रहे हैं और इसलिए निरसन या संशोधन के लिए किसी प्रस्ताव को तैयार किए जाने का प्रश्न ही नहीं उठता ।

(पैरा 3.6, पूर्वोक्त)

4.8 इलेक्ट्रानिक विभाग :-

विभाग ने कहा है कि ऐसा कोई विनिर्दिष्ट परिनियम नहीं है जो उक्त विभाग द्वारा कार्यान्वित किया जा रहा हो। इस विभाग द्वारा भेजे गए किसी विनिर्दिष्ट प्रस्ताव के अभाव में विधि आयोग द्वारा कोई टीका-टिप्पणी नहीं की जा सकती है।

(पैरा 3.7, पूर्वोक्त)

4.9 खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय :

धान कुटाई उद्योग (विनियमन) अधिनियम, 1958 और धान कुटाई उद्योग (विनियमन और अनुज्ञापन) अधिनियम, 1969 पहले ही निरसित किए जा चुके हैं। मीसरा अधिनियम, एम. ज्वेह बोर्ड अधिनियम, 1981 पशुपालन विभाग को अंतरित कर दिया गया है और साथ ही, अर्थात् आवश्यक वस्तु अधिनियम के अधीन प्रख्यापित फलोत्पाद आदेश, 1955 भी संशोधित किया जा चुका है। तदनुसार यह कहा गया है कि उक्त विभाग से कोई प्रस्ताव अपेक्षित नहीं है।

(पैरा 3.8, पूर्वोक्त)

4.10 शहरी कार्य और नियोजन मंत्रालय : शहरी नियोजन और निर्धनता उन्मूलन विभाग :

उन्होंने सूचित किया है कि विद्यमान विधियों के पुनर्विलोकन के लिए, कोई प्रस्ताव या उपांतरणों के कोई सुझाव नहीं हैं।

(पैरा 3.9, पूर्वोक्त)

4.11 रसायन और उर्वरक मंत्रालय : उर्वरक विभाग :

उर्वरक संचलन (नियंत्रण) आदेश, 1973 : विभाग द्वारा इसमें कोई संशोधन विवक्षित नहीं है।

(पैरा 3.10 पूर्वोक्त)

4.12 परमाणु ऊर्जा विभाग :

निरसन या संशोधन के लिए कोई प्रस्ताव नहीं भेजा गया है।

(पैरा 3.11, पूर्वोक्त)

4.13 संचार मंत्रालय, डाक विभाग :-

विभाग ने, भारतीय डाकघर अधिनियम, 1898 को, जहां अपेक्षित हो, कुछ संशोधनों के साथ बनाए रखने का विनिश्चय किया है। फिर भी, इस बाबत कोई प्रस्ताव आयोग में संसूचित नहीं किए गए हैं। सरकारी बचत बैंक अधिनियम और सरकारी बचत पत्र अधिनियम को लोक भविष्य निधि अधिनियम के साथ मिलाए जाने के संबंध में इस रिपोर्ट के पूर्वोक्त पैरा 3.1 (iii)(क) के अधीन हम पहले ही सहमत हो गए हैं।

(पैरा 3.12, पूर्वोक्त)

4.14 विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय :-

अनुसंधान और विकास उपकर अधिनियम, 1988 तथा प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड अधिनियम, 1995 में संशोधन के कोई प्रस्ताव प्राप्त नहीं हुए हैं।

(पैरा 3.13, पूर्वोक्त)

4.15 सूचना और प्रसारण मंत्रालय :

(i) प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1867 की बाबत विभाग द्वारा अधिनियम का और पुनर्विलोकन अपेक्षित नहीं है।

(ii) चलचित्र अधिनियम, 1952 के संबंध में, पहले ही अधिनियम में संशोधन पुरःस्थापित किए जा चुके हैं और अब राज्य सभा में लंबित है।

(iii) प्रेस परिषद् अधिनियम, 1978 के संबंध में, यह कहा गया है कि भारतीय प्रेस परिषद् अधिनियम में कुछ संशोधन सुझाए हैं और वे विचाराधीन हैं तथा उस निमित्त प्रस्ताव शीघ्र ही आयोग को भेजे जाएंगे।

(iv) प्रसार भारती अधिनियम, 1990 के संबंध में, विभाग द्वारा यह कहा गया है कि वर्तमान स्थिति में, अधिनियम का और पुनर्विलोकन आवश्यक नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि नई सरकार अधिनियम का पुनर्विलोकन कराना चाहती है। अतः, अधिनियम में कोई संशोधन करते समय या इस विषय पर नया अधिनियम लाते समय उच्चतम न्यायालय के निर्णय में विनिर्दिष्ट राय का निष्ठतः पालन किया जाना चाहिए।

(पैरा 3.14, पूर्वोक्त)

हम तदनुसार सिफारिश करते हैं।

हस्ता०/-
(न्यायमूर्ति बी० पी० जीवन रेड्डी)
(सेवानिवृत्त)
अध्यक्ष

ह०/-
(सुश्री न्यायमूर्ति लीला सेठ)
(सेवानिवृत्त)
सदस्य

ह०/-
(एन० एम० घटाटे)
सदस्य

ह०/-
(आर० एल० मीना)
सदस्य सचिव

तारीख : 24-7-98

उपाबंध -1

अ०शा०सं०44(1)/97-वि०आ०

10 अक्तूबर, 1997

प्रिय,

माननीय प्रधानमंत्री की 15 अगस्त, 1997 को की गई उद्घोषणा के अनुसरण में, विधि आयोग के लिए भारत सरकार द्वारा अधिकथित निर्देश-निबंधनों में एक निर्देश "अप्रचलित विधियों का पुनर्विलोकन / निरसन" है, अर्थात् :-

(क) ऐसी विधियों का पता लगाना जो अब जरूरी अथवा सुसंगत नहीं हैं और जिन्हें तुरंत निरसित किया जा सकता है ;

(ख) ऐसी विधियों का पता लगाना जो आर्थिक उदारीकरण की विद्यमान दशा के अनुरूप हैं और जिनमें कोई परिवर्तन जरूरी नहीं है ;

(ग) ऐसी विधियों का पता लगाना जिनमें परिवर्तन या संशोधन अपेक्षित है और उनके संशोधन के लिए सुझाव दें ;

(घ) विभिन्न मंत्रालयों/विभागों के विशेषज्ञ समूहों द्वारा किए गए पुनरीक्षण/संशोधन के सुझावों पर उनके समन्वयन और सामंजस्यकरण की दृष्टि से, व्यापक परिप्रेक्ष्य में विचार करना ;

(ङ) ऐसे विधानों की बाबत, जिनका एक से अधिक मंत्रालय/विभाग के कार्यकरण पर प्रभाव पड़ता है, मंत्रालयों/विभागों द्वारा उसको किए गए निर्देशों पर विचार करना ; और

(च) विधि के क्षेत्र में, नागरिकों की शिकायतों को शीघ्रता से निपटाने के लिए उपयुक्त उपायों का सुझाव देना ।

2. उपर्युक्त के अनुसरण में, विधि आयोग ने, अप्रचलित विधियों के निरसन की वांछनीयता या अन्यथा के विशेष निर्देश से विधियों की जांच आरंभ की है । आपसे अनुरोध है कि आप ऐसी सभी विधियों/अधिनियमों की एक पूर्ण सूची तैयार करें जिनके साथ आपके विभाग का संबंध है और जिनके ऊपर उल्लिखित मद (क), (ख), (ग) और (च) के विशेष निर्देश से उन पर अपनी टीका-टिप्पणी के साथ उसे आयोग को भेजें ताकि हम कार्य को यथाशीघ्र पूरा करने में समर्थ हो सकें । ऊपर मद (घ) में निर्दिष्ट विशेषज्ञ समूह को, यह भी

सलाह दी जाए कि वे इस प्रयोजन के लिए आवश्यक समन्वय हेतु विधि आयोग से सम्पर्क जारी रखें।

3. सरकार ने कार्य को पूरा करने के लिए विधि आयोग के लिए समय सीमा निर्धारित की है, अतः, आपसे अनुरोध है कि पूर्वोक्त सामग्री निश्चित रूप से एक मास के भीतर भेज दें।

सादर,

आपका,

(आर०एल० मीना)

सेवा में,

(संलग्न सूची के अनुसार)

उपाबंध - 2

आर०एल०मीना,
सदस्य-सचिव और
सचिव ,भारत सरकार
टेली 03383382

विधि आयोग
भारत सरकार
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली-1

अर्द्धशा०सं06(3)/41/97-वि०आ०(वि०स०) तारीख 23 फरवरी, 1998

प्रिय

कृपया " अप्रचलित विधियों के पुनर्विलोकन / निरसन " के संबंध में, मेरा तारीख 10 अक्तूबर, 1997 का अर्द्ध शा० पत्र सं० 44(1)/97-वि०आ० देखें (प्रति संलग्न) ।

2. विधि आयोग को, आपके विभाग से अभी तक कोई उत्तर/सूचना प्राप्त नहीं हुई है । आपकी ओर से मांगी गई अपेक्षित सूचना के अभाव में, आयोग का अध्ययन रुक रहा है ।

3. आपसे अनुरोध है कि सुसंगत जानकारी यथाशीघ्र भेजें ।

सादर,

भवदीय,

(आर० एल० मीना)